प्रेस पंजीयन एम.पी.एच.आई.एन./२०११/४८५६५

देश के हर नगर व ग्रामांचल में
दैनिक निर्दलीय
को प्रतिनिधि चाहिए
साहित्यिक ,सांस्कृतिक व सामाजिक
अभिरुचि वालों को प्राथमिकता।
संपर्क करें-+91 8839797448/9424443401
निर्दलीय प्रकाशन
फ११६/७ शिवाजी नगर, भोपाल ४६२ ०१६

निर्दलीय प्रकाशन का स्वर्ण जयंती वर्ष

निर्दलीय

संपर्क-फ-११६/७ शिवाजी नगर, भोपाल

निष्पक्षता, निर्वैरता व निर्भयता का दैनिक प्रवक्ता

ई-मेल: nirdaliyadaily@gmail.com,nirdaliya@rediffmail.com

दैनिक निर्दलीय
साप्ताहिक निर्दलीय
और मासिक निर्दलीय
अब तीनों स्वरूपों में वेबसाइट
www.nirdaliya.comपर उपलब्ध
विधिः पहले उक्त लिंक पर जाएं
फिर क्लिक करें
e-paper, इसके बाद दैनिक निर्दलीय जिस तारीख का पढ़ना हो वह तारीख और पृष्ठ संख्या डालें।
साप्ताहिक हेतु weekly निर्दलीय
और मासिक हेतु Magazine निर्दलीय क्लिक करें
निर्दलीय एफ-११६/७ शिवाजी नगर, भोपाल-४६२०१६

वर्ष-५३/१५ | अंक- २२१ | भोपाल १२ मार्च, डाक १३ मार्च २०२६ | भोपाल व नई दिल्ली से प्रकाशित | पृष्ठ -८ | मूल्य १+१/-(संप्रेषण/स्वैछिक)

आज मैं अपने विवेक के बल खड़ा हूं। अपनी परछाइयों से लड़ कर अड़ा हूं।।

त्वरित विचार
अग्र लेख-३३

कैलाश आदमी

जिस प्रकार हम सत्य तथा धर्म को परिभाषित करते हैं, उस प्रकार अपने ज्ञान तथा विवेक को नहीं कर पाते। कारण यह कि अधिकांश विचारक अपने सीमित ज्ञान को ही अपना विवेक मान बैठते हैं। सत्य या धर्म भले ही एकांगी हो सकते हों, परन्तु ज्ञान तथा विवेक एकांगी नहीं हो सकते, वे भिन्न हैं।

हम जो कुछ कर रहे हैं या फिर लिख-पढ़ रहे हैं, वह सब कुछ ज्ञान आधारित है पर जो कुछ हम कर रहे हैं, वह क्यों कर रहे हैं-यह विवेक आधारित है, और यही विवेक है।

हमें क्या सोचना चाहिये क्या नहीं, अथवा क्या करना चाहिये-क्या नहीं ? इत्यादि भूलकर, हम ऐसा सब कुछ कर बैठते हैं, जो गलत होता है। अपने चचंल मन के बशीभूत होकर बस यही सबसे बड़ी गलती हम कर जाते हैं जो हमारी विवेकहीनता का परिचायक है।

अविवेकपूर्ण ज्ञान का होना, एक पहिये की गाड़ी अथवा बिना लगाम का घोड़ा होने जैसा है। जैसे सोने को सुहागा, वैसे ही ज्ञान को विवेक सुहाता है। लोग अपनी कमी को अक्सर छुपाकर रखना चाहते हैं। अपने अहं को सर्वोपरि रखना चाहते हैं, जो किसी स्तरहीनता से कम नहीं है। इसे हम व्यक्ति की नादानी या अज्ञानता भी कह सकते हैं।

मुख्य बात यह है कि मनुष्य मात्र एक कार्मिक ही न बना रहे, यदि ऐसा है भी तो उसे ज्ञान की अपेक्षा रखनी चाहिये। किसी की सलाह मानने से उसे परहेज नहीं होना चाहिये, इसमें कोई आपत्ति नहीं होना चाहिए। यह स्तरहीनता नहीं, सहकार, समायोजन और सहिष्णुता का भाव है। ...और यदि वह वास्तव में ज्ञानी है, तो उसे अपने विवेक को भी साथ लेकर चलना चाहिये। बिना विवेक का ज्ञान तथा बिना ज्ञान का कर्म, कभी पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाता। परिवार के अतिरिक्त वह सामाजिक भी है, अतः इतना विवेक तो होना ही चाहिये।

जो व्यक्ति स्वविवेक से किये अथवा किये जाने वाले कार्य की विवेचना स्वयं ज्ञानपूर्वक करता है, उसे कभी लज्जित नहीं होना पड़ता। यही उसका पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ के लिये ज्ञान तथा विवेक दो अतिरिक्त हाथों की भाँति हैं, जिसके लिये अतिरिक्त बल की आवश्यकता नहीं है।

ज्ञानी और विवेकी मनुष्य समाज में जहाँ भी जाये, स्नेह और आदर पा लेता है। यही नहीं संघर्ष के क्षणों में ज्ञान और विवेक से कार्य किया जाये, तो मानसिक संघर्ष की अवधि आधी रह जाती है। इसके विपरीत विवेकहीनता का मार्ग व्यक्ति को अन्ततः पतन की ओर ही ले जाता है।

ज्ञान, बुद्धि तथा शिक्षा के उपरान्त भी, यदि व्यक्ति किसी के पास विवेक न हो, तो इन तीनों उपलब्धियों का कोई अर्थ नहीं। आत्मविवेक तथा आत्मिक आनन्द से ही विवेकानन्द बनते हैं।

सनातन कहे जाने वाले हिन्दू धर्मावलंबियों में ऐसा माना जाता है, कि राम विष्णु के अवतार हैं। उन्होंने अपने प्रत्येक कर्मक्षेत्र में धर्मशीलता, विनयशीलता के साथ विवेकशीलता का भी परिचय दिया, जिसके कारण ही उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया। ऐसा इसलिए कहां गया क्योंकि श्री राम में ज्ञान और कर्म की श्रेष्ठता पहले से विद्यमान थी और चूंकि मर्यादा विवेक में ही समाविष्ट होती है इसलिए उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहां जाना समीचीन है।

प्रायः हर व्यक्ति के सामने कोई न कोई ऐसा चरित्र या व्यक्तित्व होता है जिससे वह अपने जीवन में प्रेरणा ग्रहण करते हुए आगे बढ़ना चाहता है। इसे यू भी कहा जा सकता है कि हमारे जीवन में कोई न कोई ऐसा आदर्श व्यक्ति सामने होना चाहिए जो नैतिक व चारित्रिक दृष्टि से सम्पन्न हो। हिन्दुओं ने श्री राम को ऐसे आदर्शों से युक्त माना। अन्य धर्मों में भी ऐसे आदर्श महापुरूष हुए है जिनसे उस धर्म के मानने वाले लोग प्रेरणा ग्रहण करते हुए जीवन में आगे बढ़ते जाते है।

स्पष्ट है कि हमारे जीवन में कोई न कोई ऐसा आदर्श होता है जिसके गुणों की विवेक पूर्वक नकल करते हुए हम आगे अपनी मंजिल तय करना चाहते है। ऐसा आदर्श व्यक्ति माता-पिता, पालक, अभिभावक या गुरू कोई भी हो सकता है। किन्तु इसके लिए विवेकशीलता जैसी योग्यता ही सबसे बड़ा पैमाना होती है और योग्यता के लिए यह भी आवश्यक है कि हमने जिस आदर्श व्यक्ति को चुना है वह मौलिक गुणों की खान हो।

जहां तक मेरा खुद का संबंध है मेरे लिए मेरे पिता संत माधवानंद ही आदर्श रहें। मैं ऐसा मेहसूस करता हूं कि उनकी छबि आज भी मेरे हदय में निवास करती है। और वे मुझे मार्गदर्शन देते रहते हैं। वैसे आज कल अधिकांश लोग किसी न किसी बड़े नेता को अपना आदर्श मानते हुए उसका अनुशरण करते हैं यह जानते हुए भी कि हर नेता दूध का धुला नहीं होता।

आज हम देख रहे हैं कि अधिकांश नेता नैतिक व चारित्रिक दृष्टि से पतित हैं या पतनोन्मुख हैं। वे ज्ञान व विवेक से भी शून्य होते है। उनकी सारी तिकडमें चुनाव जीतने के लिए होती हैं और जो जीतकर पंचायत, पालिका, विधानसभा या संसद में पहुंचते है। वे सदैव अपने आवास और दफ्तर में चाटुकार किस्म के लोगों से घिरे रहते हैं। अतएव हमें किसी नेता के स्थान पर किसी ऐसे महापुरूष का अपने आदर्श के रूप में चयन करना चाहिए जो मेरे द्वारा इस आलेख के आरंभ में दर्शाये गये गुणों से संपन्न हो। इस हेतु ज्ञान के साथ विवेक आवश्यक है। विवेकशील व्यक्ति चचंल मन की निर्वाध गति पर विराम लगाने में समर्थ होता है।

अंत में मेरी दो काव्य पंक्तिया-

आज मैं अपने विवेक के बल खड़ा हूं।
अपनी परछाइयों से लड़ कर अड़ा हूं।।

वृद्धाश्रम- सामाजिक कलंक या बदलते समय की आवश्यकता?

रमा निगम

सामाजिक कलंक के रूप में कई लोग अभी भी वृद्धाश्रम को नकारात्मक नजरिये से देखते हैं।

समाज में वृद्धाश्रम का नाम आते ही अक्सर जनमानस के मन में एक नकारात्मक छवि बन जाती है। बहुत से लोग इसे ऐसे स्थान के रूप में देखते हैं जहाँ परिवार अपने बुजुर्गों को छोड़ देता है। और अक्सर वापस पलट कर नहीं देखता है या आंशिक अथवा पूर्ण रूप से नजरअंदाज कर देता है।

यही कारण है कि आज भी वृद्धाश्रम को सामाजिक कलंक की नजरों से देखा जाता है लेकिन बदलते हुए समय व सामाजिक संरचना और जीवनशैली के साथ इस विषय को नए दृष्टिकोण से समझने की आवश्यकता है।

भारतीय समाज परंपरागत रूप से संयुक्त परिवार की संस्कृति से जुड़ा रहा है। अभी तक यहाँ बुजुर्गों को घर का मार्गदर्शक, अनुभव का भंडार और परिवार की धुरी माना जाता था। उनके सान्निध्य में परिवार की कई पीढ़ियाँ साथ रहती थीं लेकिन समय के साथ शहरीकरण, रोजगार के लिए पलायन, छोटे परिवारों की बढ़ती प्रवृत्ति और जीवन की बढ़ती तेज़ गति ने पारिवारिक संरचना को पहले की तुलना में बदल कर रख दिया है।

अब कई बार परिस्थितियाँ ऐसी बन जाती हैं कि परिवार के सभी सदस्य दिन-रात काम में व्यस्त रहते हैं और बुजुर्गों की समुचित देखभाल करना कठिन हो जाता है।

यहीं से वृद्धाश्रम की आवश्यकता सामने आती है। कई आधुनिक वृद्धाश्रम आज केवल रहने का स्थान नहीं हैं, बल्कि वे बुजुर्गों को सुरक्षित वातावरण, चिकित्सा सुविधा, नियमित दिनचर्या, सामाजिक गतिविधियाँ और समान आयु वर्ग के लोगों का साथ प्रदान करते हैं।

कई बुज़ुर्ग स्वयं भी वहाँ रहना पसंद करते हैं क्योंकि उन्हें वहां उनके जैसे ही बुर्जुग व्यक्तियों का समूह मिल जाता हैद्व तथा अकेलेपन से मुक्ति भी मिल जाती है और उनका जीवन अधिक व्यवस्थित हो जाता है। फिर भी समाज का एक बड़ा वर्ग इसे परिवार की असफलता के रूप में देखता है।

लोगों को लगता है कि माता-पिता को वृद्धाश्रम भेजना कर्तव्य से विमुख होना है। वास्तव में समस्या वृद्धाश्रम की नहीं, बल्कि उस मानसिकता की है जिसमें हर स्थिति को एक ही नजरिये से देखा जाता है।

हर परिवार की परिस्थितियाँ अलग होती हैं और हर बुजुर्ग की ज़रूरतें भी अलग होती हैं। यह भी उतना ही सच है कि कई बार कुछ लोग जिम्मेदारी से बचने के लिए भी वृद्धाश्रम का सहारा लेते हैं, जिससे इसकी छवि और अधिक नकारात्मक बनते हुए सामने आती है लेकिन हमें यह समझना होगा कि यदि किसी बुजुर्ग को वहाँ सम्मान, देखभाल और साथ मिल रहा है, तो इसे केवल त्याग का प्रतीक मानना उचित नहीं है। समाज को इस विषय पर संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बुज़ुर्ग जहाँ भी रहें चाहे वह घर में रहें या वृद्धाश्रम में रहें। उन्हें उचित सम्मान, स्नेह और सुरक्षा मिलनी चाहिए।

मेरा मानना ही नहीं यह मेरा मजबूत विचार है कि यदि परिवार नियमित रूप से उनसे मिलने जाए, संवाद बनाए रखे और भावनात्मक जुड़ाव बनाए रखे, तो वृद्धाश्रम भी एक सकारात्मक विकल्प बन सकता है।

अंततः यहां यह प्रश्न स्थान का नहीं है। बल्कि आपसी संवेदनाओं का है। बुज़ुर्ग हमारे अनुभव, संस्कार और जीवन की धरोहर हैं। इसलिए हमारा प्रयास यही होना चाहिए कि उनके जीवन का यह चरण या उनकी अंतिम पारी सम्मान, स्नेह और आत्मसम्मान के साथ बीते। तभी समाज वास्तव में संवेदनशील और परिपक्व कहलाएगा।

वरिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार,
भोपाल

आयुर्वेद से अंतरिक्ष तक : भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं की भूमिका पर राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

निर्दलीय संवाद

कोलकाता। राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर शब्दभूमि प्रकाशन द्वारा आयोजित ऑनलाइन राष्ट्रीय संगोष्ठी 'भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाएँः आयुर्वेद से अंतरिक्ष तक' का शुभारंभ डॉ. रेखा कुमारी त्रिपाठी ने प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए किया।

अपने वक्तव्य में उन्होंने शब्दभूमि प्रकाशन का परिचय देते हुए कहा कि यह साहित्य की वह उर्वर भूमि है, जहाँ शब्द केवल लिखे नहीं जाते, बल्कि संवेदना, विचार और समय की चेतना के साथ अंकुरित होते हैं।

उन्होंने बताया कि शब्दभूमि प्रकाशन कोई विशुद्ध व्यावसायिक प्रकाशन गृह नहीं, बल्कि लेखकों का अपना सहकारी मंच है, जिसका उद्देश्य साहित्य का संवर्धन, संरक्षण और प्रसार है। यह मंच कविता, कहानी, आलोचना, संस्मरण, शोध तथा वैचारिक लेखन जैसी विविध विधाओं को प्रोत्साहित करता है और नए तथा स्थापित दोनों प्रकार के रचनाकारों को गरिमा और गुणवत्ता के साथ अपनी रचनाएँ पाठकों तक पहुँचाने का अवसर देता है। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि शब्दभूमि प्रकाशन हिंदी के साथ-साथ भारतीय भाषाओं की समृद्ध परंपरा को भी महत्व देता है और अनुभवी संपादकीय व डिज़ाइन टीम के सहयोग से पुस्तक निर्माण के साथ-साथ साहित्यिक गोष्ठियों और सांस्कृतिक आयोजनों के माध्यम से साहित्यिक संवाद को आगे बढ़ाने का प्रयास करता है।

इस संगोष्ठी का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं के ऐतिहासिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक और सामाजिक योगदान को पुनः रेखांकित करना तथा समकालीन परिप्रेक्ष्य में उनके महत्व को समझना था। कार्यक्रम में देश के विभिन्न राज्यों से आभासीय पटल पर जुड़े विद्वानों, शोधार्थियों और लेखकों ने भाग लेकर भारतीय परंपरा में स्त्री-ज्ञान की विविध धाराओं पर अपने विचार प्रस्तुत किए।

संगोष्ठी के अंतर्गत 34 प्रमुख विषयों को केंद्र में रखते हुए विमर्श आयोजित किया गया, जिनमें वैदिक ऋषिकाओं के दार्शनिक योगदान, ब्रह्मवादिनी स्त्रियों की ज्ञान-दृष्टि, उपनिषदों में स्त्री-विमर्श, बौद्ध और जैन परंपरा में भिक्षुणियों की बौद्धिक भूमिका, आयुर्वेद और लोक-चिकित्सा में महिलाओं की परंपरा, धात्री-विद्या, चरक-सुश्रुत परंपरा में स्त्री स्वास्थ्य विमर्श जैसे विषय प्रमुख रहे।

संगोष्ठी में भक्ति आंदोलन में स्त्री-स्वर, महिला लेखिकाओं की राष्ट्रवादी चेतना, भारतीय भाषाओं में स्त्री आत्मकथा, स्त्रञश्ररूक्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका, भारतीय महिला वैज्ञानिकों का अंतरिक्ष विज्ञान में योगदान तथा कल्पना चावला से चंद्रयान तक भारतीय महिलाओं के अंतरिक्ष स्वप्न जैसे समकालीन विषयों पर भी महत्वपूर्ण व्याख्यान प्रस्तुत किए गए।

इस अवसर पर देश के विभिन्न हिस्सों से आभासीय पटल पर जुड़े विद्वानों अधिवक्ता अंजू मनोत (कोलकाता), बी. मल्लिका (तमिलनाडु), डॉ. रुचि पालीवाल (उदयपुर), डॉ. रेखा भालेराव (उज्जैन), डॉ. कुसुम दीक्षित चौहान (भोपाल), अंजना त्रिपाठी (वाराणसी), डॉ. मंदा माणिकराव नांदुरकर (अमरावती), रुपाली अरुणराव हिवसे (नागपुर), शांति सोनी (बिलासपुर), अंजू पाण्डेय (मुंबई), डॉ. सपना चंदेल (शिमला), डॉ. अनिता कुमारी (जमशेदपुर), अनिता मोदी (बेंगलुरु), डॉ. कृष्णा कुमारी आर्या (महेंद्रगढ़), सुचित्रा शरदभाई कुलकर्णी (अहिल्यानगर), डॉ. सीमा रानी (झज्जर), माधुरी करसाल (बिलासपुर), प्रियंका सिंह (मुंबई), रीमा डी. राखसीया (राजकोट), काजल कुमारी (पटना), कुमारी रीता (लखनऊ), डॉ. छाया शंकर माली (कोल्हापुर), डॉ. शोभा डी, डॉ. वासंथी जी, डॉ. गीतिका सूद और डॉ. संगीता कुमारी ने अपने शोधपरक व्याख्यान प्रस्तुत किए। वक्ताओं ने इस बात पर बल दिया कि भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं की भूमिका केवल सहायक नहीं बल्कि सृजनात्मक, दार्शनिक और वैज्ञानिक नेतृत्वकारी रही है। वैदिक काल की ब्रह्मवादिनी स्त्रियों से लेकर आधुनिक वैज्ञानिकों तक महिलाओं ने ज्ञान की धारा को समृद्ध किया है।

संगोष्ठी का संचालन डॉ. रेखा कुमारी त्रिपाठी, प्रिया श्रीवास्तव और श्रद्धा गुप्ता 'केसरी' ने प्रभावी ढंग से किया। कार्यक्रम के अंत में निधि सिंह ने धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत करते हुए सभी विद्वानों, प्रतिभागियों और आयोजकों के प्रति आभार व्यक्त किया।

इस अवसर पर संगोष्ठी के संयोजक विनोद यादव ने कहा कि भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं के योगदान पर गंभीर और व्यापक शोध की आवश्यकता है, ताकि आने वाली पीढ़ियों के सामने इस समृद्ध विरासत को सही रूप में प्रस्तुत किया जा सके। संगोष्ठी ने यह संदेश दिया कि भारतीय सभ्यता की ज्ञानधारा में महिलाओं की भूमिका प्राचीन काल से ही केंद्रीय रही है और आधुनिक विज्ञान एवं अंतरिक्ष अनुसंधान तक उसकी निरंतरता बनी हुई है।

इंद्रधनुष

शशि प्रभा शाक्य 'शशि'

इंद्रधनुष के सदृश जैसा,
यह जीवन संसार।
आपस में सब मिलते हैं,
तो खुशी के रंग हजार ।
एक रंग की खुशियाँ तो,
होतीं हैं केवल अपनी ।
विभिन्न रंगों में सज जाएँ,
तो बन जाती हैं सबकी ।
अकेले खुश होने से अच्छा,
खुशियाँ बाँटो सब में ।
सबकी खुशियों में खुश होते,
सदा रहें वह जग में ।
'हमारे अपने' खुश होते तो,
खुशी चौगुनी होती ।
वरन खुशी का नाटक ही,
यह एक छलावा होती ।
इंद्रधनुष के एक ही रंग को,
कोई कैसे समझेगा ।
जब तक नहीं मिलेंगे सारे,
इंद्रधनुष कैसे बन लेगा ।
हर घर में विभिन्न स्वभाव के,
होते हैं सब प्राणी ।
लेकिन सामंजस्य बनाकर,
खुशियाँ होतीं भारी ।
आपसी मेल और सौहार्द से,
बन जाता है तालमेल ।
एक दूजे को समझ सकें तो,
खुशियाँ नहीं रहती बेमेल ।
प्रेम की वर्षा होती है जब,
इंद्रधनुष बन जाते हैं ।
मन की खुशियों के फूल खिलें,
तो सब प्यारे बन जाते हैं ।
इंद्रधनुष के रंगों जैसा,
संसार सभी का पुलकित हो ।
कोई जग में दुखी रहे ना,
आपस में प्रेम पल्लवित हो ।
सबके मन में प्रेम की वर्षा,
और आदर सम्मान रहेगा ।
उन जीवन का इंद्रधनुष,
अब सदा दिखाई देगा ।

अवधपुरी, भोपाल